RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-05
Issue-03
March -2020

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com[Peer Reviewed Journal]

शरीर शुद्धि एवं षटकर्म

Santosh Rani

M.A. Yoga (Net),Dept. of Phy.Education, Chaudhary Ranbir Singh University, Jind

ARTICLE DETAILS

Article History
Published Online: 16 Mar 2020

Keywords
घट, षटकर्म, शुद्धिकरण, हठयोग, आयुर्वेद, त्रिर्दोष शरीर, क्रान्तिमय, सूक्ष्म, ध्यान, वस्ति, न्यौलि।

ABSTRACT

मनुष्य जीवन भगवान ने हमें अनेक योनियों के बाद दिया है वो भी बहुत अच्छे कर्मों को करने के बाद। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज में रहतें हुए वह अपने कर्त्तव्य कर्मों को करता है। और अपने कार्यों को करते–करते वह अपने शरीर का ध्यान रखना भूल जाता है। इसलिए मनुष्य अनेक बिमारियों का शिकार हो जाता है। उन बिमारियों को ठीक करने के लिए योग में बहुत से उपचार है। उनमें से एक है षटकर्म। शारीरिक और मानसिक शुद्धि के लिए हठयोग में षटकर्म कियाएं दी गई है। शरीर की शुद्धि एवं राजयोग में प्रवेशार्थ अपने शिष्यों को ऋषियों ने षटकर्म की शिक्षा का उपदेश दिया। ये कियाएं मानव–शरीर का कायाकल्प करके उसे रोगमुक्त, दीर्घायु, स्वस्थ, पुष्ट एवं कान्तिमय बनाती है। ''षटकर्म की ये कियाएं स्थूल शरीर को शुद्ध करती हुई सूक्ष्म शरीर के शुद्धीकरण में भी अत्यन्त सहायक है। इन कियाओं के अभ्यास बीस प्रकार के कफरोग, सभी वातरोग, पित्तरोग, कुष्टरोग, उदर रोग, फुफ्फुस–विकार, हृदय एवं वृक्क की विकृतियां दूर होती है।'' इसलिए शोधपत्र में हम घट (शरीर) शुद्धि की कियाओं का वर्णन करेंगे।

प्रस्तावना

सुस्वास्थ्य ही सम्पूर्ण सूखों का आधार। स्वास्थ्य है तो जहान है, नहीं तों श्मशान है। स्वस्थ शरीर कौन सा है, आयुवर्दे के प्रसिद्ध ग्रन्थ सुश्रुत संहिता में कहा है– ''जिसके तीनों दोष वात, पित्त एवं कफ सम हो, जठराग्नि सम (न अति मन्द, न अति तीव्र) हो, शरीर को धारण करने वाली सप्त धातुएं, रस, रक्त, मांस, मेद, अस्ति, मज्जा तथा वीर्य उचित अनुपात में हो, मल–मूत्र की किया सम्यक प्रकार से होती हो दस इन्द्रियां (कान, नाक, आंख, त्वचा, रसना, गुदा, उपस्थ, हाथ, पैर एवं जिहवा) एवं मन इनका स्वामी आत्मा भी प्रसन्न हो तो ऐसे व्यक्ति को स्वस्थ कहा जाता है।'' ऊपर लिखित समस्त शरीर के अंग–प्रत्यंग को स्वस्थ रखने के लिए सबको समान रखने के लिए योग में हठयोग विद्या, षठक्रम किया बताई गई है। शरीर की शुद्धि के लिए षटक्रम किया अति उत्तम है। जिसका वर्णन इस प्रकार है।

षट्क्रम :– षट्क्रम दो मुख्य प्राण प्रवाहों, इडा और पिगंला के मध्य सामंज्स्य स्थापित करते है, जिससे शारीरिक और मानसिक शुद्धि एवं सन्तुलन की प्राप्ति होती है। ये शरीर में उत्पन्न त्रिदोषों – वात्त, पित्त, कफ को भी सन्तुलित करते है। आयुर्वेद और हठयोग के अनुसार, इन तीनों दोषों में असन्तुलन व्याधि को जन्म देता है। इन षट्क्रमों का उपयोग प्राणायाम तथा योग के अन्य अभ्यासों से पहले ही किया जाता है। ताकि शरीर विकार रहित हो जाए तथा आध्यात्मिक मार्ग में अग्रसर होने में बाधा उत्पन्न न करें। षट्क्रम को कभी भी पुस्तक में पढकर अभ्यास नहीं करना चाहिए। षट्कर्म को ज्ञाता गुरू के निर्देशन में करना चाहिए। स्वात्माराम जी कहते है – ''जिसके शरीर में स्थुलता और कफ की मात्रा अधिक हो उसे छः शोधन–कियाएं करनी चाहिये। किन्तु जिनमें त्रिदोषों (वात–पित्त–कफ) की समानता हों, उन्हें षट्किया करने की विशेष आवश्यकता नहीं है।'' (3) ये 6 कियाएं शरीर को शुद्ध करके आश्चर्यजनक परिणाम देती है। हठयोग प्रदिपिका में षट्कर्म की छः कियाओं का वर्णन किया गया है :– ''धौति, वस्ति, नेति, त्राटक, नौलि एवं कपालभाति में छः शोधन कियाएं कहे गये है। स्वामी स्वात्माराम जी षटकिया के बारे में कहते है कि ''शरीर को शुद्ध करने वाली तथा आश्चर्यजनक फल देने वाली ये छः कियाएं गोपनीय रखनी चाहिए। इसलिए योगिराजों दवारा इन्हें बहुत महत्व दिया गया हैं।'' घेरण्ड संहिता में महर्षि घेरण्ड ने भी षट्क्रमों का वर्णन उचित ढंग से किया है। ''धौति, वस्ति, नेति, लौलिकी, त्राटक और कपालभाति, इन इन छः कर्मों का आचरण योगि के लिए आवश्यक है।'' इन षट्कर्मों के अभ्यास से व्यक्ति समाधि को प्राप्त करता है। इन षट्क्रमों दवारा शरीर की शुद्धि होती है। इनका प्रयोजन न केवल शरीर की शुद्धि वरन आत्मशुद्धि भी है, क्योकि शरीर की शुद्धि के साथ–साथ जब हमारे भीतर से विचार दूर होने लगते है, तब स्वास्थ्य की प्राप्ति होती है। बिना शुद्धि के शरीर योग के उच्च अभ्यासों के लिए तैयार भी नहीं हो पाता। शरीर शुद्धि के पश्चात मनुष्य इस पृथ्वी पर दीर्घायु हो जाता है।

RRIJM 2015, All Rights Reserved

हठयोगप्रदिपिका के अनुसार षटकम :–

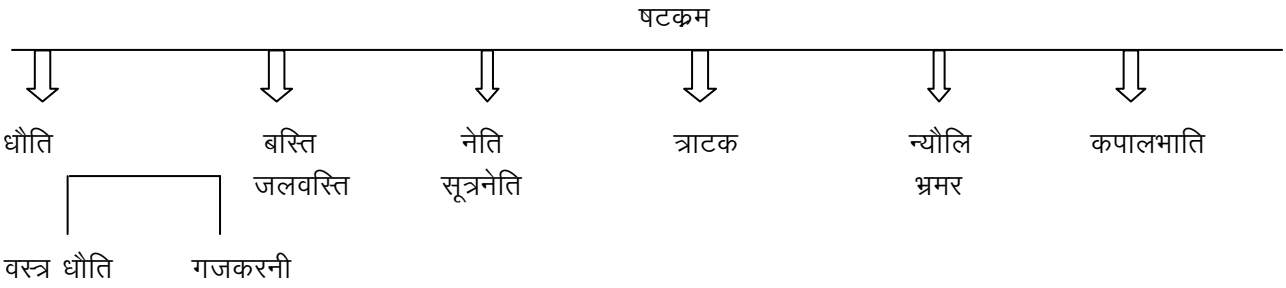

घेरण्ड संहित के अनुसार षटकम की विधियाँ :–

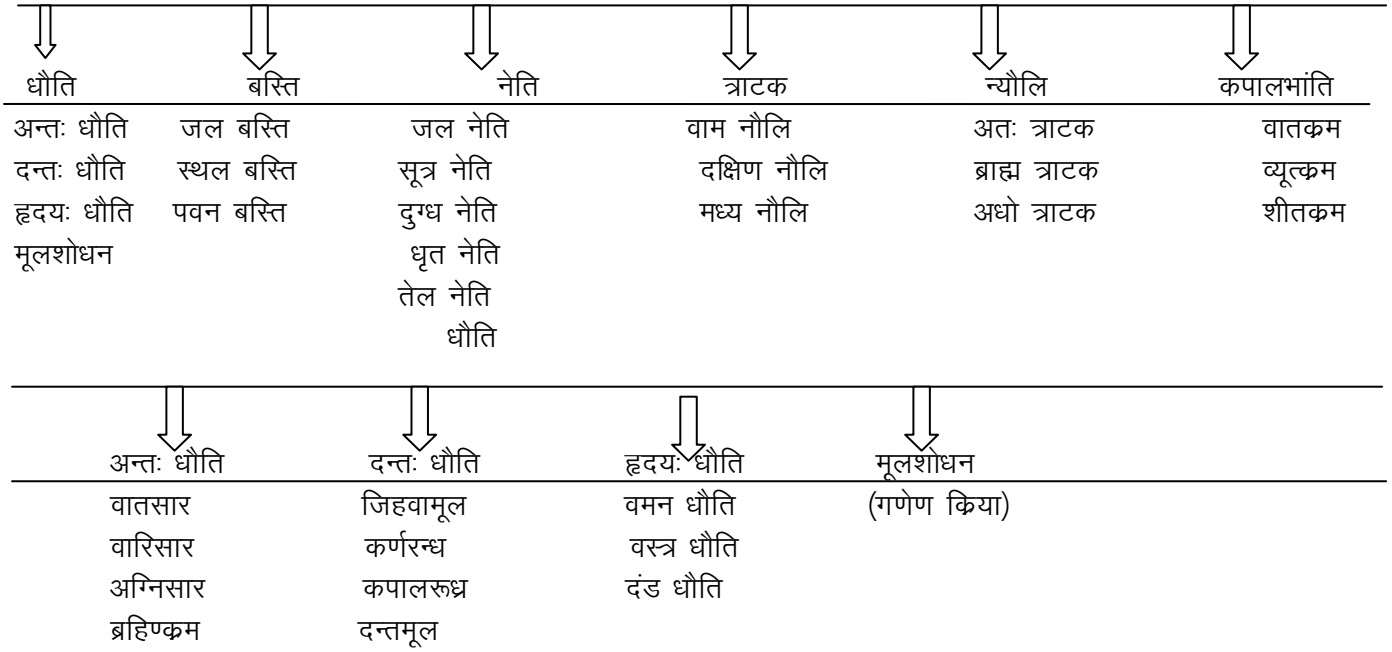

धौति :– ''अन्तधौति, दन्त धौति, हृद धौति और मूलशोधन के भेद से धौतिकर्म चार प्रकार का माना गया है। अमाशय के शुद्धिकरण के लिए धौति किया होती है, धौति का अर्थ है – धोना। इसमें ''चार अगुंल चौडा, पन्द्रह हाथ लम्बा कपडा, जल में भिगो कर गुरू के निर्देश के अनुसार धीरे–धीरे निगलना चाहिए। पुनः इसे धीरे–धीरे बाहर निकालना चाहिए, इसे धौति–किया कहते है।'' धौतिकिया के फलस्वरूप खांसी, दमा, तिल्ली, कुण्ट तथा अन्य बीसों प्रकार के कफ–सम्बन्धी रोग निसंदेह नष्ट हो जाते है। विभिन्न योगियों ने षटकमों को विभिन्न भागों में बांटा है। धौति के विभिन्न भागों का वर्णन इस प्रकार है। योगी स्वात्माराम ने धौति दो प्रकार की बताई है वस्त्र धौति और गजकरनी। लेकिन महर्षि घेरण्ड ने धौति के तेरह प्रकार बताए है। जिनका वर्णन निम्नलिखित है –

अन्तधौति :– अन्तधौति का अर्थ है आन्तरिक सफाई। अन्तधौति में तीन चीजों का प्रयोग होता हैं। हवा, पानी और कपडा। अन्तधौति के चार प्रकार है – ''वातसार, वारिसार, (अग्नि) वाद्यिसार और वहिस्कृत। ये चारों ही शरीर की आंतरिक सफाई करने के लिए की जाती है।''

1. वातसार धौति :– वातसार का अर्थ है वायु तथा सार का अर्थ है तत्व अर्थात वायुतत्व से अन्तकरण की सफाई करना वातसार अर्न्तधौति का उद्देश्य है।

विधि :– कौवे की चोंच के समान दोनों होठों को करके धीरे–धीरे वायु को पिएं, फिर पेट में इसका परिचालन करें व ढकार के रूप से निकाल दे। पहले नाक द्वारा श्वास छोडना है फिर नाक बंद करके वायु को मुहं द्वारा पेट में भरना है फिर वायु को रोककर अग्निसार करें व डकार द्वारा मुहं से वायु निकालें। यह किया उकडु बैठकर करनी चाहिए।

लाभ :– जठराग्नि की तीव्रता पित्त बढानें से रोकती है, गैस या दुर्गन्धयुक्त वायु को बाहर निकालती है।

2. वारिसार धौति :– (लघु शंख प्रक्षालन) वारि+सार, जल+तत्व अर्थात जल द्वारा तत्व की सफाई। जल के द्वारा आंतरिक अगों की सफाई करना।

विधि :– परिस्थिति के अनुसार गुनगुना पानी मुख से धीरे–धीरे जल पीते हुए कण्ठ तक जल से भर लेना है। इसके बाद उदर को चला कर यानि गडासना, तिर्यकताडासना, कटिचक्रासन, तियर्क भुजंगासन व उदाकर्षण आसन करके

RRIJM 2015, All Rights Reserved

जल को अधोमार्ग से निकाल देना है, अभ्यास को तेजी से करे और बार–बार शौच जाए, अगर शौच न आए तो पानी फिर पिरटं और आसन करे। यह वारिसार नामक धौति परम गोपनीय एवं शरीर को स्वस्थ करती है। इसका प्रत्यत्नपूर्वक साधन करने वाले योगियों को देवताओ के समान शरीर की प्राप्ति होती है।

सावधानियां :– 1. अभ्यास से पहले शाम को हल्का भोजन ही लें।

2. वारिसार धौति का अभ्यास करने के बाद दो–तीन दिन आसनों का अभ्यास ना करें।

3. क्रिया के बाद 1/2 घण्टा आराम करें। 3–4 घंटे सोना नहीं है। इसके बाद मूगंदाल की खिचडी में घी डालकर पीऐ।

4) 3–4 घंटे नहाना वर्जित है।

5. सिरदर्द व बुखार हो सकता है, कोई चिंता की बात नहीं है।

6. मिर्च मसाले, तले पदार्थ, तेल एक सप्ताह तक पुर्णतः वर्जित है।

लाभ :– संपूर्ण पाचन तन्त्र की सफाई।

3. अग्निसार धौति :– अग्नि द्वारा पेट की सफाई अर्थात जठराग्नि को प्रदिप्त करना, इसकी अग्नि को बढाना ही अग्निसार धौति है। जिस क्रिया द्वारा जठराग्नि को तीर्व करके पाचन शक्ति को बढाया जाता है।

विधि :– वज्रासन में बैठकर या खडे होकर भी किया जा सकता है। दोनों पैर कंधो के समान्तर खडे होकर, पैरो को थोडा फैलाकर खडे होए फिर थोडा आगे झुके। हाथों को घुटनों का आकुचंन व प्रसारण करे।

सावधानी :– 1. खाली पेट करनी है।

2. महिलाएं, गर्भावस्था व रजोनिर्वति में न करे।

3. अल्सर, हार्निया, दमा रोगी, बी. पी. एच. के रोगी न करें।

लाभ :– 1. पाचन के सभी रोग जैसे – कब्ज, पित्त, वायु का प्रकोप, अपच में लाभकारी।

2. मानसिक रोगों में लाभकारी।

4. बहिष्कृत धौति :– यह बहिष्कृत धौति वातसार धौति के समान ही है। बहिष्कृत का अर्थ त्यागने, छोडने या निकालने के अर्थ में प्रयुक्त होता है। इस धौति में अन्तकरण से अवशिष्ट वायु को गुदा मार्ग से बाहर निकालते है।

विधि :– यह क्रिया आसान नहीं है इसलिए इसे योग्य गुरु की देखरेख में करे अन्यथा परेशानी हो सकती है। ध्यानात्मक आसन में बैठकर दोनों हाथों को घुटने पर रखें, काकी मुद्रा में वायु का धीरे–धीरे पान करें। घंटे तक वायु का परिचालन पेट पर होने दें।

सावधानी :– इसका अभ्यास वहीं व्यक्ति करें जिसें 1 घंटे श्वास रोकने का अभ्यास हों। इसे एक योगी ही कर सकता है।

लाभ :– 1) शरीर हल्का, कांतिमान, उदरगत विकार दूर, कुण्डलीनी शक्ति का जागरण में लाभकारी है।

2) आंतिक शुद्धि व देवताओं के समान शरीर।

दन्त धौति :– दन्त धौति का शाब्दिक अर्थ है – दाँत की सफाई लेकिन यहाँ पर इसका अर्थ जो लिया गया है वह शीर्ष प्रदेश की सफाई, स्वच्छता से है। घेरण्ड संहित में महर्षि घेरण्ड ने कहा है –''दन्त धौति के पांच भेद है – दन्तमूल, जिह्वामूल, कर्णरूध्र और कपालरूध्र। ये चार प्रकार की धौतियां हुई, इनमें दोनों कानों के रूध्रों से होने वाली दो धौति मानी गयी है। इस प्रकार ये पाचं हुई।'' ये सभी हमारी ज्ञानेन्द्रियों की सम्पूर्ण स्वच्छता के लिए प्रयोग में लायी जाती है। ज्ञानेन्द्रियों पर अन्य शारीरिक क्रियायें अवलम्बित है। प्रातः काल बिना भुले ज्ञानेन्द्रियों की सफाई करनी चाहिए। दांत, मुंह, जिह्वा, कर्ण एवं नासिका की सफाई करना योगी का परम कर्त्तव्य है। ज्ञानेद्रियों द्वारा ही हमें अस्तित्व का ज्ञान होता है, अतः इसकी सफाई न रखने से इनमें दोष उत्पन्न हो जाता है। इनकी सफाई को सबसे अधिक महत्व दिया गया है।

1.) दन्तमूल धौति :– दन्तमूल अर्थात दांतो की जड को धोना। इस अभ्यास से दातों की जड की स्वच्छता की जाती है।

विधि :– विशेष औषधि जिसे खदिरा (कत्था) जो पान में लगाकर खाया जाता है। कत्थे का रस तथा चिकनी मिटट्ी को उंगली से दातों के मसूडों को घिसना। जिससे दांत मजबुत होते है तथा रोग नहीं रहते मुंह के छालों को ठीक करने में भी लाभकारी है। यह क्रिया प्रातः सायं भोजन के बाद भी की जा सकती है।

लाभ :– दातों में फंसा मल निकलता है, और दांतों की सफाई होती है तथा दांत स्वच्छ बनते है। मुहं के छाले पडे हो तो खादिर का रस, औषधि का काम करता है।

2.) जिह्वा शोधन धौति :– जीभ की स्वच्छता। जीभ के शोधन की वह प्रक्रिया जिससे जीभ की लम्बाई बढती है तथा अनेक रोगों से लाभकारी है।

विधि :– तर्जनी, मध्यमा, अनामिका तीनों उंगलियों को मिलाकर जीभ की जड तक लें जाएं व धीरे–धीरे रगडने से कफ दोष का निवारण होता है। इसके बाद जीभ पर घी या मक्खन लगाना है। जिससे जीभ मुलायम हों जाए।

सावधानी :– उंगुलियो के नाखुन कटे होने चाहिए, मुंह में या जीभ पर छाले न हो अपनी उंगलियों को मुहं में ज्यादा अन्दर न डालें।

लाभ :– 1. जिह्वा की मसाज होती है तथा जीभ की लम्बाई बढती है।

2. गले व श्वास नली में जमा श्लेष्मा साफ हो जाता है।

3. खेचरी मुद्रा की सिद्धि में लाभकारी।

RRIJM 2015, All Rights Reserved

3) कर्ण रंध्र धौति :– इसमें कान के दोनों छिद्रों की सफाई की जाती है। इसलिए इसे कर्ण रंध्र धौति कहतें है।

विधि :– महर्षि घेरण्ड कहतें है – तर्जनी और अनामिका को मिलाकर योगी जन दोनों कानों के छिद्रों की सफाई करते है। इस विधि के नित्य अभ्यास से नाद अनुभूति होती है। तर्जनी व अनामिका उंगुली को गीला करके, कान के अन्दर डालकर उसे घुमायें। अगुंली को गली करने में सरसों का तेल व लहसुन डालकर भी तेल का उपयोग का सकते है।

लाभ :– 1.) धूल–मिटट्री की सफाई।

2.) कान का मैल साफ।

3.) कान संबधी रोगों से छुटकारा।

4.) दिव्य नाद की अनुभूति होती है ये इसका अध्यात्मिक लाभ होता है।

4) कपालरंध्र धौति :– नवजात शिशु के सिर का वह स्थान जो पिचकता महसूस होता है उस स्थान की सफाई करना ही कपालरंध्र धौति है।

विधि :– दाहिने हाथ का कटोरा सा बनाकर उसमें पानी भरे तथा शीर्ष प्रदेश पर धीरे–धीरे थपकी देना। उसे 3–4 बार दोहराएं।

हद धौति :– हद का अर्थ है हृदय और धौति का अर्थ है धोना इस धौति से हृदयप्रदेश, अन्ननलिका, आमाश्य की सफाई होती है। महर्षि घेरण्ड ने हृदधौति के तीन भेद बताएं है – ''दण्ड धौति, वमन धौति और वसन धौति (वस्त्र धौति)'' हृदधौति में बतलाया है कि छाती में एक शून्य उत्पन्न करना, जिसके द्वारा हमारे फेफडे अपने भितर एकत्र कफ और अशुद्ध तत्वों को बाहर निकाल सके। श्वसन नली से भी इन्हें बाहर निकाले। इन प्रक्रियाओं को हृदधौति कहते है।

1.) दण्ड धौति :– केले के मृदु भाग के डण्डे, हल्दी के डण्डे या बेत को हृदय के मध्या बार–बार घुसा कर धीरे–धीरे निकालना चाहिए। फिर कफ, पित्त कलदे का मुख द्वारा रेचन करना चाहिए। यह कम हृदय रोग का भी निश्चित रुप से नाश का देता है। तीन फूट लम्बी और छः मिलीमिटर मोटी रबर की एक कोमल नली लेकर उसे पानी में उबालिए, जिससे वह कीटाणु–रहित हो जाए। जली के जिस भाग को अन्दर लेना है, उसे पत्थर पर थोडा घिसना चाहिए। गुनगुना नमक युक्त पानी यथाशक्ति 1–2 गिलास पिए। अब सामने झुककर खडे हों जाए। नली का एक सिरा मुख में डालकर उसे धीरे–धीरे निगलने का प्रयत्न करें। नली को इतना निगले कि उसका अगला सिरा आमाशय में पंहुच जाऐ। दूसरा सिरा बाहर नीचे लटकता हुआ होगा। आमाश्य में नली पहुचतें ही साइफन क्रिया द्वारा पानी स्वत : बाहर आने लगेगा। इस प्रकार, सम्पूर्ण जल को बाहर निकाले दे।

सावधानी :– नली का प्रयोग करने से पूर्व खींचकर देख लेना चाहिए। अन्यथा नली के पेट में टूट जाने का भय रहता है।

लाभ :– इस क्रिया द्वारा कफ, पित्त और क्लेद बाहर निकल जाते है। भूख खुलकर लगने लगती है और दमे के रोगियों को भी विशेष लाभ होता है। दमा में श्वसन–नली में जो ऐठन पैदा हो जाता है, वह भी इस क्रिया के द्वारा दूर होती है, जिससे दमें के दौरे पडने भी रूक जाते है।

2.) वमन :– वमन धौति का अर्थ उल्टी करने से हैं। वमन धौति दो प्रकार की होती है। पहला अभ्यास को खाली पेट किया जाता है। और दूसरे को भोजन के बाद। वमन धौति के पहले प्रकार को कुजल क्रिया और दूसरे को व्याग्रक्रिया कहते है। कुज्जल क्रिया का अभ्यास सामान्य एक स्वस्थ व्यक्ति के लिए है। व्याध्र क्रिया का अभ्यास रोग की अवस्था में करना चाहिए, जब पेट में तकलीफ हो।

विधि :– प्रातः काल शौचादि से निवृत होकर यह क्रिया करनी चाहिए। क्रिया के लिए 1–2 किलोग्राम गुनगुने जल में थोडा नमक डालकर जितना सम्भव हो, उतना प्रत्यत्नपूर्वक पानी पियें। फिर 90 डिग्री पर झुककर बायें हाथ की बीच की दो अगुंलियों कों मुख में डालकर गले से स्पर्श करें, इससे वमन होकर पानी बाहर निकल जाता हैं। इस प्रकार गले में अंगुलियों के स्पर्श से पूरा पानी बाहर निकाले। जिनके नेत्रों में लाली रहती है उसको यह क्रिया बलपूर्वक नहीं करनी चाहिए।

लाभ :– 1. आमाश्य को स्वस्थ व विकार रहित बनाती है।

2. जिसको कफ रोग, श्वास रोग, दमा एवं अम्लपित हों उनकें लिये विशेष लाभकारी है।

3. सिर में चक्कर आना, ज्वर में भी वमन धौति प्रकुपित पित्त को बाहर निकालती है।

3.) वस्त्र धौति :– सूति कपडा जो एक पटट्री सी होती है जिससे पम्पन संस्थान की सफाई की जाती है वस्त्र धौति कहलाती है। ''धौति क्रिया के फलस्वरूप खांसी, दमा, तिल्ली, कुप्ट तथा अन्य बीसों प्रकार के कफ–सम्बन्धी रोग नष्ट हों जाते है।''

विधि :– मलमल का एक 22 फूट लम्बा और चार अंगुल चौडा वस्त्र लें। उसको गोलाकार लपेटकर एक पात्र में पसे 5 मिनट तक उबले हुए साफ पानी में छोड दें। उकडु बैठकर वस्त्रधौति के एक सिरे को जिह्वामूल पर रखे। अब धीरे–धीरे जैसे भोजन करते है, वैसे लार के साथ वस्त्र को निगलिए। बीच–बीच में थोडा–थोडा पानी भी पीते जाए। इससे आसानी से कपडा अन्दर जाऐगा। प्रारम्भ में वमन जैसा अनुभव होगा। जब वमन होने लगे तो मुख बन्द कर ले। प्रारम्भ में 3–4 फुट कपडा अन्दर जाएगा। अभ्यास होने पर धीरे–धीरे पूरी धौति निगल सकेंगे। धौति निगलने के बाद खडे होकर 2–3 बार उडडीयान बन्ध और दक्षिण नौलि का संचालन करे न्यौलिक्रिया के पश्चात बैठकर धीरे–धीरे वस्त्र को बाहर निकाल दे। यदि बाहर निकालते समय वस्त्र बीच में अटक जाए तो थोडा निगलकर फिर बाहर निकाले। बाहर

RRIJM 2015, All Rights Reserved

निकालकर ठीक प्रकार से साबुन आदि से धोकर सुखाकर रख ले।

सावधानी :– 1. यह कठिन क्रिया है इसे योग्य शिक्षक के निर्देशन में करना चाहिए।

2. वस्त्रधौति आरम्भ करने के पश्चात लगभग 20 मिनट बाद उसे निकालना आवश्यक होता है नही ंतो पाचन क्रिया आरम्भ हो सकती है। जिससे हानि होगी।

3. जिन्हें अत्यधिक खटटी खटारे आती हों या आमाश्य में किसी प्रकार का व्रण (अल्सर) आदि हो , उन्हे यह क्रिया नहीं करनी चाहिए।

लाभ :– 1. कफ रोगियो के लिए विशेष हितकर है। जीर्ण जठरशोध में भी इसका अभ्यास उत्तम है।

2. वस्त्र धौति आमाश्य की भितियों के ऊपर आये हुए श्लेयमा के आवरण को हटा देती है, जिससे पाचन रस का निर्माण होकर भूख लगने लगती है।

मूल्यशोधन :– मूलशोधन को गणेश–क्रिया भी कहतें है। मूलशोध का अर्थ है गुदा क्षेत्र की सफाई। घेरण्ड ऋषि कहतें है कि ''मूलशोधन न होने तक अपान वायु की कुरता नष्ट हो पाती। इसलिए प्रयत्नपूर्वक मूल शोधन कर्म करना चाहिए। हल्दी की जड अथवा मध्यमा अंगुली के द्वारा जल–योग से पुनः प्रक्षालन आवश्यक है। इस कर्म से कोष्ठ–काठिन्य एवं अमार्जीर्ण आदि का निवारण होकर जठराग्नि प्रदीप्त होती है।''

विधि :– हल्दी का डंडल जिसकी लबाई 4 इंच हों, उसे लेकर उसका छिलका उतारे जिससे उसका रस निकलने लगे फिर उकडु बैठकर गुदा द्वार में डालते है और 2 मिनट तक छोड देते है। ताकि जहरीले तत्व रस उस में चिपक जाऐ। मध्यमा अंगुली से घी लगाकर भी यह क्रिया की जाती है।

लाभ :– 1. मलाश्य संबंधी रोग दूर होते है जैसे कब्ज, बवासीर।

2. इस क्रिया से अवशिष्ट आसानी से बाहर आ जाते है।

3. अपान वायु का संतुलन करती है।

4. उत्सर्जन तंत्र मजबुत व बलिपट बनता है इस क्रिया से नाडी और कोशिकाओं की ओर रक्त संचार तेज होता है।

5. इस धौति से पाचन संस्थान के रोगों में भी लाभ मिलता है।

(2) वस्ति :– षटकम क्रिया में वस्ति क्रिया दूसरी शोधन क्रिया है। जिसका अर्थ है बडी आंत की सफाई करना। हठप्रदिपिका में स्वामी स्वात्माराम जी ने कहा है – ''नाभिपर्यन्त जल में स्थित हो गुदा में एक नली डालकर उल्टकटासन करते हुए साधक गुदा का संकोचन करे और धोये। इसे वस्ति–क्रिया कहतें है।'' लेकिन महर्षि घेरण्ड ने घेरण्ड संहिता में वस्ति कर्म को दो प्रकार का बताया है – 1. जल वस्ति 2. शुपक वस्ति, जल वस्ति का अभ्यास जल वस्ति से किया जाता है। शुप्क वस्ति का अभ्यास भूमि पर सूखे स्थल पर किया जाता है।

(1.)जल वस्ति :– नाभि तक पानी आ जाए ऐंसे स्वच्छ जल में खडे होकर यह क्रिया करनी चाहिए। यह क्रिया किसी बडे टब में पानी भरकर उल्टासन में बैठकर की जा सकती है। उल्टासन में बैठकर छः – सात इंच लम्बी और आधा इंच मोटी लकडी की छिद्रयुक्त नली जिसके दोनों भाग घिसकर तथा चिकना द्रव्य लगाकर गोला किए हुए हो, गुदा दवार में प्रकिया करें। इससे पानी तब तक ऊपर खिंचता रहेगा जब तक की आप श्वास न ले। श्वास बाहर निकालकर उडडीयान बन्ध एवं मूलबन्ध लगाते हुए नौलि मध्यमा करे। श्वास अन्दर लेने से पूर्व नलि के दुसरे हिस्से पर अंगुली लगाकर बन्द कर ले। पुनः श्वास को बाहर निकाकर पूर्ववत पानी ऊपर खीचें। इस प्रकार 4–5 बार में पर्याप्त पानी बडी आतं में चला जाएगा। अब नलि को बाहर निकाल दे और खडे होकर नौलि क्रिया करे। इससे पानी आतं में फैलकर उसकी सफाई कर देगा। दाई ओर से नौलि घुमाने पर शौच जाने कर इच्छा होगी, तब शोच चले जाऐ। यह क्रिया बिना नली के भी नाभि तक के पानी में पूर्ववत उड्डीयान बन्ध एवं मूल बन्ध लगाकर पानी ऊपर चढाकर की जा सकती हैं, तब गुदादवार अपने आप खुल जाता और पानी अन्दर चला जाता है। पानी में थोडा नीबूं का रस मिला सकते है। इस क्रिया का अभ्यास प्रातः शौचादि से निवृत्त होकर करना चाहिए।

लाभ :– वस्ति की बडी आंत की शुद्धि होती है, जिससे कब्ज आदि रोग दूर होती है। यह क्रिया एनिया से भी लाभकारी है। इससे वायु विकार अपच, कब्जियत पित्त, कफ रोग दूर होते है। तांत्रिका तंत्र तथा त्वचा रोगों में लाभकारी है।

(2.) पवन वस्ति :– उकडू बैठकर पूर्ववत श्वास बाहर निकालकर मूलबन्ध एवं उड्डीयान बन्ध लगाकर नौलि मध्यमा करें, वायु अन्दर भर जाएगी। इस प्रकार वायु अन्दर भरकर बाहर निकालनर वायुवस्ति कहलाता है।

लाभ :– पूर्व के समान है। परन्तु पूर्वक्रिया जलवस्ति में मल बाहर निकलता है, और उसमें केवल दूषित वायु बाहर निकलेगी इसलिए यह क्रिया वायु–विकारों के लिए विशेष उपयोगी एवं बवासीर में भी लाभप्रद है और इससे जठराग्नि भी प्रदीप्त होती है।

(3.) नेति :– नेति क्रिया षटकर्म के अन्तर्गत शुद्धिकरण की तीसरी प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया का मुख्य उद्येश्य शीर्ष प्रदेश, खोपडी के क्षेत्र की सफाई। नेति क्रिया आन्तरिक नाडियां को सवेदनशील बनाने में सहायक है। 'स्वात्माराम जी' ने नेति ''चिकनी और लगभग 9 इंच लम्बी सूत्र को नासिके में डालकर उसे मुख से बाहर निकाले। इसे नेति कहा है।'' लेकिन महर्षि घेरण्ड ने नेति के बारे में कहा है कि ''वातिश्तभर लम्बा डोरा लेकर नासिका मे घुसाये और मुख से

बाहर निकल दें। इसे नेति कर्म कहते है। इसका साधन करने से खंचरी की सिद्धि कफ–दोषों की निवृति और दिव्य दृष्टि की उपलब्धि होती है। नेति क्रिया दो प्रकार की है। (1) जल नेति (2) सूत्र नेति।

(1.)जल नेति :– जल दवारा नासिका मार्ग का शुद्धिकरण किया जाता है। इससे कान, नाक, आंख से संबंधिक रोगो की शुद्धि होती है।

विधि :– एक किलों पानी में लगभग 10 ग्राम सेधा नमक डालकर गुनगुना गर्म करके नेति करने वाले लोटे में भर ले। प्रातः काल का समय नेति के लिए उपयुक्त है। रोगविशेष में दोनो समय भी कर सकते है। लोटे की नली को दायी नासिका में लगाकर बायी ओर की नासिका को थोडा नीले रखें। मुख को थोडा खोलकर श्वास–प्रश्वास की प्रकिया मुख से हो करे। बायी नासिक से जल अपने–आप बाहर निकलने लगेगा। इसी प्रकार दूसरी नासिका से करें।

लाभ :– 1. सिर र्दद, नजला आदि में लाभकारी।

2. आखों व कानों संबंधि रोगों में लाभकारी।

3. एलर्जी में विशेष लाभकारी है।

(2.) सूत्रनेति :– सूत्र से बनी हुइ एक रस्सी, जिसे सूत्रनेती कहा जाता है। 7.8 इंच लम्बे सूती धागों में मोम डालकर बाटं लीजिए। उस मोम को कडा होने दे। इस प्रकार सूत्र नेति बनती है।

विधि :– सूत्रनेति को नासिका में डालने से पहले जल में भिगो देना चाहिए। भिगोकर थोडा वृताकार में जहां सूत्रनेति का मोम लगा रहता है, वहां से मोडना चाहिए। जिससे नेति आसानी से नासाद्वार में प्रविष्ठ हो जाऐ। अब दायी नासिका में शनै नेति को डालें। मुख में आने पर हाथ की सहायता से धीरे–धीरे मुख से बाहर निकाले।

लाभ :– 1.) नेति क्रिया से साइनस ग्रंथि पर गहरा प्रभाव पडता है।

2.) नाक से निकलने वाले श्लेष्मा पर नियंत्रित करती है।

3.) नेति क्रिया से तनाप, चिन्ता, अवसाद के रोगियों का भी लाभ पहुंचता है।

4.) मस्तिष्क में गर्मी, मिर्गी की बीमारी में भी इसका सार्थक प्रभाव पडता है।

5.) आंख, नाक, और कान के रोगों में विशेष लाभप्रद है।

6.) श्वसन संस्थान के रोगों साइनोसाइटिस, ब्रोकाइटिप्स अस्थमा में लाभकारी है।

7.) नासिकाओं को पर्याप्त मात्रा में ऑकसीजन मिलने लगती है।

(4.) न्यौलि :– नौलि षटकर्मो में शुद्धिकरण की चौथी प्रकिया है। जो धौति के प्रकारों में अग्निसार क्रिया का अध्ययन किया। न्यौलि क्रिया अग्निसार का ही एक प्रकार है हम यूँ कह सकते है कि न्यौलि क्रिया अग्निसार का ही एक अभ्यास है। महर्षि घेरण्ड ने नौलि की क्रिया विधि व लाभों को समझाते हुए कहा है – ''उदर को दोनों पारर्वों में अत्यन्त वेगपूर्वक घुमाना चाहिए। यह लौलिकी, अर्थात नौलि कर्म सब रोगों का नाशक और जठरानल का उद्दीपक है।'' स्वामी स्वात्मायम ने न्यौति को परिभाषित करतें हुए कहा है – कन्धे को थोडा आगे की और झुकाकर तीव्र गतिवाले भँवर के समान उदर को दाहिने से बायें और बायें से दाहिने और घुमाना चाहिए। सिद्धों के द्वारा इसे न्यौलि कहा गया है।'' न्यौलि चार प्रकार की होती है।

(1.) मध्यम नौलि :– इस नौलि में सामान्य रूप से पेट की मांसपेशियों को सिकोड कर रखते है।

विधि :– पैरों के बीच एक डेढ फूट का अन्तर रखते हुए घुटनों पर हाथ रखकर खडे हो जाऐं। हाथों से घुटनों को दबाऐं। दृष्टि भूमि पर होगी। नौलिक्रिया को प्रारम्भ में करना कठिन होता है, इसलिए इससे दक्षता प्राप्त करने के लिए पहले अग्निसार क्रिया करे। श्वास को बाहर निकालकर पेट को अन्दर की ओर खीचें कि पेट पीठ से लग जाए, फिर पेट को बाहर करे। इस प्रकार इस क्रिया की यथाशक्ति आवृति करें। ऐसा करने से पेट मुलायम हों जाऐगा और नौलि क्रिया करने में सुविधा होगी। अब नौलिक्रिया के लिए पूर्ववत झुके रहें। घुटनों को दबाते हुए पार्श्वभाग से उदर को संकुचित करके मध्य भाग को बाहर निकालकर सामने वाली दोनों मांसपेशियों को बाहर निकालने का प्रयत्न करें। जब श्वास लेने की इच्छा हों तों श्वास लेकर पुनः पूर्ववत करें।

(2.) वामनौलि :– पूर्व की भांति खडे होकर नौलि मध्यमा करे। नौलि मध्यमा होनें पर बायी ओर थोडा झुकते हुए बाये हाथ पर दबाव डाले, इससे उदर की बडी पेशियों में बायी पेशी आगे को निकल आऐगी। दायां हिस्सा इस क्रिया में ढीला रहना चाहिए।

(3.) दक्षिण नौलि :– वामनौलि की तरह दक्षिण नौलि है। दक्षिण ओर उदरगत मांसपेशियों के समूह को ले जाना दक्षिण नौलि कहलाती है।

(4.) भ्रमर नौलि :– जब ऊपर की तीनों नौलियों को सामान्य, वाम, दक्षिण को एक साथ जोड देतें है तो वह भ्रमण नौलि कहलाती है। जब दोनों दिशाओं में नौलि होने लगे, तो नौलि को बाहर निकालकर हाथों से जघाओं की मालिश करें। अर्थात हथेलियों को ऊपर नीचे करे। ऐसा करने से अपने–आप नौलि दायी से बायी और घुमने लगेगी। अभ्यास में कुछ कला अवश्य लग जाता है।

लाभ :– 1. 'हठयोगप्रदिपिका' में नौलि को सभी क्रियाओ में मूर्धन्य कहा है : ''हठक्रियामौलिरियं च नौलि :।''

2. मन्याग्नि, कब्ज, गैस, अतिसार, संग्रहणी उदर का मोयपा इत्यादि समस्त उदरोग निश्चित रू‍प से दूर होते है।

3. स्त्ररोग, कष्टार्तव आदि में लाभकारी है।

4. कुण्डलिनि – योग में प्राण–अपान का योग कराने वाली यह महत्वपूर्ण क्रिया है।

RRIJM 2015, All Rights Reserved

सवधानी :– स्लिप डिस्क, हृदयरोग तथा अल्सर में इस क्रिया को नहीं करना चाहिए। भोजन के बाद यह अभ्यास नहीं करना यौगिक षटकर्म गुरू के निर्देशन में करना चाहिए। यह बात ध्यान रखने योग्य है। गर्भवती महिलाओं के लिए वर्णित है। किसी भी प्रकार का पेट र्दद है तो नहीं करनी।

त्राटक :– त्राटक का अर्थ है स्थिर दृष्टि से किसी एक केन्द्र को देखना। महर्षि घेरण्ड ने त्राटक की प्रक्रिया में एक सूक्ष्म लक्ष्य की ओर टकटकी लगा कर देखते रहने की बात की है। महर्षि घेरण्ड कहतें है कि ''निमेष–उन्मेष को रोक कर। जब तक आसुं न गिरने लगे, तब तक किसी सूक्ष्म लक्ष्य की ओर टकटकी लगाकर देखते रहने को त्राटक कहते है। इसके अभ्यास से शाम्भवी मुद्रा की स्थिति होती है। नेत्र के दोषों का निवारण होकर दिव्य दृष्टि की प्राप्ति होती है। लेकिन स्वात्माराम जी कहते है ''स्थिरदृष्टि से किसी सूक्ष्म लक्ष्य को एकाग्र होकर तब तक देखना चाहिऐ जब तक की आखं से आंसू बाहर न आ जाए। आचार्यो ने इसे त्राटक कहा है।'' 1. अंतः त्राटक 2. बहित्रार्टक 3. अधोत्राटक।

1.) अंतः त्राटक :– इसमें आखों को बंद कर मन की कल्पना शक्ति को जाग्रत कर मन में एक दृश्य को ठहराकर उस पर त्राटक करतें है। इसके लिए हम आंतरिक व मानिसक प्रतिक को चुन सकते है शक्ति को एक निश्चित मार्ग की ओर ले जाने के लिए अतः त्राटक बहुत प्रभावशाली है।

2.) बहिर्त्राटक :– इसमें हम किसी वस्तु का मूर्त रूप लेते है चाहे चन्द्रमा, पेड, तारे या किसी गुरू चिन्ह हो एक बार चुनाव के बाद बदलाव न करे। एक बिन्दु पर जब तक देखना है, जब तक आसुँ न आ जाऐ। तत्पश्चात उस प्रतीक का आखँ बंद करके अवलोकन करता है। इस प्रक्रिया में मोमबती का प्रयोग भी किया जा सकता है जिस वर्तमान में कई लोग (Candle light Meditation) भी कहते है।

3.) अधोत्राटक :– इस प्रक्रिया में आखों को आधा खुला व आधा बन्द रखा जाता है। योग के ग्रंथों में इसे प्रतिपाद दृष्टि नासिकाग्र मुद्रा या कही इसे शाम्भवी मुद्रा भी कहा जाता है। अधोत्राटक में लक्ष्य या प्रतिक को प्रतिपदा दृष्टि से देखा जाता है। त्राटक में खुली आखों को पूणिमा दृष्टि, बंद आखों को अमावस्या दृष्टि तथा अधखुली आखों को प्रतिपदा दृष्टि कहा जाता है।

लाभ :– 1. त्राटक से मन की चंचलता समाप्त हो जाती है, जिससे योगिक भूमियों में प्रवेश सरलता से किया जा सकता है।

2. नेत्रों की ज्योति बढती है।

3. सांयकाल दीपक पर त्राटक करने से स्वप्न नहीं आते और यदि आते है, तो बहुत अल्प मात्रा में। त्राटक से नींद गहरी आती है।

4. चित स्थिर व तनाव को दूर करता है।

5. स्मरण शक्ति बढाने में सहायक।

6. त्राटक के माध्यम से सिद्धि प्राप्त होती है।

7. दैविक लाभ में कहा गया है – 'दिव्य दृष्टिः प्रजायते।'' दिव्य दृष्टि की प्राप्ति होती है। यह इसका दैविक लाभ है।

8. ''नेत्र रोग विनश्यन्ति'' यह आखों के दोष को दूर करता है। यह त्राटक का शारीरिक लाभ है।

9. ''शाम्भवी जायते ध्रवम्'' शाम्भवी सिद्धि प्राप्त होती है। यह इसका आध्यात्मिक लाभ है।

(6.) कपाल भाति :– कपालभाति षटकर्म की अन्तिम प्रक्रिया है। कपाल का अर्थ है मस्तिषक, व भांति का अर्थ होता है चमकाना। कपालभांति क्रिया में मस्तिष्क का शोधन होता है। कपालभाति एक शोधन क्रिया भी कहा जाता है। स्वामी स्वात्माराम जी कपालभाति के संदर्भ में कहते है कि ''लुहार की धौंकनी के समान शीघ्रता से रेचक–पूरक करने से कपालभाति होती है। यह कफ–रोगों को नष्ट करने वाली है।'' लेकिन महर्षि घेरण्ड कहते है ''वातक्रम, व्यूत्क्रम और शीतक्रम कपालभाति के भेद है ये तीन प्रकार का है। इसका साधन करने से कफ से उत्पन्न दोनों का निवारण होता है। इससे प्राणमय कोश की शुद्धि होती है। कपालभाति के तीनों प्रकारों का वर्णन इस प्रकार है :–

(1.) वतक्रम कपालभांति :– वात का अर्थ है हवा कर्म का अर्थ है क्रिया। कपाल का अर्थ मस्तिष्क, भाति का अर्थ है धोंकनी। इस प्रकार हम कह सकते है कि वायु क्रिया द्वारा कपाल की धोंकनी की तरह शुद्धि करना, वातक्रम कपालभांति क्रिया कहलाती है।

विधि :– झटके के साथ श्वास को बाहर छोडना और श्वास को बाहर छोडते हुए नाभि पर झटका लगाना है। ध्यानात्मक आसन में बैठकर कमर, गर्दन व रीढ की हड्डी को एक सीधे में रखे। दोनों नासिका छिद्रों से श्वास को झटके के साथ बाहर निकाले तथा पेट को अन्दर पिचकायें। तत्पश्चात विश्राम कर पुनः प्रक्रिया को दोहराएं।

लाभ :– 1. पाचन संस्थान के रोगों में लाभकारी।

2. मस्ष्कि का शोधन कर मानसिक विकारों से मुक्ति।

3. मोटापा को कम करता है तथा फेफडों की क्षमता को बढाता है।

4. कुण्डलिनी जागरण में सहायक है।

(2.) व्यूत्क्रम कपालभाति :– व्यूत का अर्थ है उल्टा, क्रम का अर्थ है क्रिया। व्यूत्क्रम कपालभाति में पानी को नाक से खींचकर मुंह से निकाला जाता है।

विधि :– सबसे पहले हल्का गर्म पानी नमकयुक्त पानी लें, उस पानी को गिलास में डालकर, नासिकाछिद्रों को पानी में डुबोकर दोनों नासिकाछिद्रों से जल को अन्दर खींचे फिर श्वास छोडतें हुए मुहं से पानी को बाहर निकाले। यहीं प्रक्रिया 3–4 बार दोहराऐं।

लाभ :– 1. नासिक छिद्र को स्वच्छ करने वाला अभ्यास है।

RRIJM 2015, All Rights Reserved

2. खेंचरी मुद्रा की सिद्धि में लाभकारी, नेत्रों रोगों में लाभकारी है।

3. गले के साथ–साथ नासिका व मुहं का भी शोधन होती है।

4. आज्ञा चक्र पर साकारात्मक प्रभाव पडता है।

सावधानी :– यह एक कठिन अभ्यास है योग्य गुरु के निर्देशन में करना चाहिए।

(3.) शीतक्रम कपालभाति :– शीत का अर्थ है ठण्डा, क्रम का अर्थ किया। इस किया से शीतलता प्रदान होती है। इसलिए इसे शीतक्रम कपालभाति कहतें है।

विधि :– सर्वप्रथम हल्का नमकयुक्त गुनगुना पानी लें। पानी को गिलास की सहायता से मुंह में डालकर पूरा मुंह भर लें। लम्बी गहरी नाक से श्वास ले। पानी को गले तक ले जाएं इसके बाद ठोडी को कण्ठकुप पर मिलाये, श्वास को दोनों नासिका छिद्रों से बाहर निकालेगे तब जल स्वत : बाहर आयेगा। इस अभ्यास को बार–बार दोहराएं।

लाभ :– 1. इस किया से शरीर सुन्दर व कान्तिमय हो जाता है।

2. नासिका मार्ग व श्वसन संस्थान की गन्दगी बाहर निकल जाती है।

3. शीतक्रम कपालभाति से वृद्धावस्था, बीमारी छु नहीं सकती है।

4. मन शान्त रहता है मानसिक रोगों से मुक्ति मिलती है।

5. इससे व्यक्ति का शरीर कान्तिमय दिखने लगता है।

सावधानी :– 1. यह एक गोपनीय किया है, गुरू के संरक्षण में इसका अभ्यास करें।

2. प्रयोग किये जाने वाला जल स्वच्छ हों उसमें नमक डाला हुआ हो।

हठरत्नावली में श्री निवास योगी ने षटक्रम किया में शरीर शुद्धिकिया में आठ प्रकार की शुद्धि किया का वर्णन किया है। इन्होंने शरीर को शुद्ध व स्वच्छ रखने की आठ कियाएं बताई है–

1 चक्रि 2. नौलि–नौलि 3. धौति 4. नेति 5. वस्ति–वस्ति 6. गजकरणी 7. त्राटक 9. मस्तकभ्रांति (कपालभांति) इन्होनें षटक्रम की क्रियाओं से अलग शक्रियायें चक्री व गजकरणी का वर्णन ओर किया है।

निष्कर्ष :– अतः हम निवकर्ष रूप में कह सकते है कि शारीरिक शुद्धि में षटकर्म क्रिया बहुत ही लाभकारी सिद्ध हुई है। षटक्रम से हमारे आन्तरिक व बाह्य शरीर की शुद्धि होती है। षटक्रम करने से हमें आध्यात्मिक , मानसिक, शारीरिक, दैविक लाभ प्राप्त होता है। हठयोग की क्रियाओं में षटक्रम के धौतिक्रम से पाचन स्थान के भीतरी अगों की पूर्व रूप से सफाई होती है। इस क्रिया से शारीरिक लाभ प्राप्त होता है। वस्ति क्रिया से हमारे बडी आतं की सफाई होती है। जिससे अवशिष्ट पदार्थ बाहर निकल जाते है। नेति क्रिया से गले के ऊपर के रोगों में आखं, नाक, कान, सभी में शुद्धि मिलती है। नौलि क्रिया द्वारा हमारा पाचन स्थान मजबूत होता है तथा आतों की मालिश होती है और जठराग्नि प्रदीप्त करने में सहायक सिद्ध हुई है। त्राटक क्रिया द्वारा हमें आन्तरिक व शारीरिक लाभ प्राप्त होता है तथा आन्तरिक शान्ति मिलती है। त्राटक क्रिया ध्यान लगाने में सहायता प्रदान करती है तथा कपालभांति क्रिया द्वारा श्वसन नली तथा कपाल की शुद्धि होती है। वस्तुतः हठयोग की क्रियाएं राजयोग की प्राप्ति के लिए ही की जो शक्ति के प्रतिक रूप में है उसकी जाग्रति षटकर्मों के अभ्यास में निहित है और इसका जागरण ही हठयोग का परम लक्ष्य है। देखने में भले ही यह क्रियाऐं सरल एवं सहज हो पर वास्तव में इन्हें एक कुशल मार्गदर्शन में ही करना चाहिए। उपर्युक्त शोधपत्र से यह सिद्ध होता है कि षट्क्रम क्रिया योग सिद्धि में अत्यंत सहायक है क्योकि शरीरिक व मानसिक शुद्धि के बाद राजयोग की सिद्धि प्राप्त करने में आसानी होती है। अतः सामान्य मनुष्य को भी षट्क्रम का अभ्यास करना चाहिए ताकि शरीर स्वच्छा, कोमल, कांतिमान व बलिष्ठ बन करें। इसलिए कहा गया है, जो करेगा योग वह रहेगा निरोग। ''प्रथम सुख निरोगी काया''।

संदर्भ सूचि :–

- षटकर्म निर्गतस्थौल्यः कफदाषमलाधिकः।
  प्राणायाम ततः कुर्यादनायासेन सिध्याते।। (योग साधना एवं योगचिकित्सा रहस्य) पृ० सं० 115
- समदोष : समाग्निश्च समधातुमलक्रियः।
  प्रसन्नसत्मेन्द्रियमना : स्वस्थ इत्यभिधीयते।। (सुश्रुत संहित)(15:49)
- मेद : श्लेष्माधिक : पूर्व षट्कर्माणि समाचरत्े।
  अन्यस्तु नाचरेतानि दोषाणां समभावतः।। (हठप्रदिपिका 2/21 श्लोक)
- धौतिवस्तिस्तथा नेतित्राटक नौलिक तथा।
  कपालभाति श्चैतानि षट्कर्माणि प्रचक्षते।। (हठयोगप्रदिपिका 2/22)

RRIJM 2015, All Rights Reserved

- कर्मषट्कमिदं गोप्यं घटशोधनकारकम्।
  विचित्रगुणसधायि पूज्यते योगिपुङ्गवै :।। (हठयोगप्रदिपिका 2/23)
- धौतिर्वस्तिस्तथा नेति : लौलिकी त्राटक तथा ।
  कपालभातिश्चैतानि षट्कर्माणि समाचरेत्।। (घेरण्डसंहिता 1/2)
- अन्तधौति दन्त धौति र्ह्द्धौतिर्मूलशोधनम्।
  धौति चतुर्विधा कृत्वा घटं कुर्वन्ति निर्मलम्।। (घेरण्डसंहिता) 1/13)
- चतुरङ्गुलविस्तार हस्तपच्चदशायतम्।
  गुरूपदिष्टमार्गेण सिक्तं वस्त्र शनैर्ग्रसेत्।।
  पुन : प्रत्याहरेच्चैतदुदिंत धौतिकर्म तत्।। (हठप्रदिपिका 2/24)
- वातसार वारिसार वाद्रिसार बहिष्कृतम्।
  घटस्य निर्मलार्थाय ह्मन्तधौतिश्चतुर्विधा।। (घेरण्डसंहिता1/14)
- दन्तमूल जिह्वामूल रूध्र च कर्णयुग्मयो :।
  कपालरूंध्र पच्चैते दन्त धौति र्विधीयते।। (घेरण्डसंहिता 1/25)
- ह्रदधौति त्रिविधां कुर्याद्दण्डवसनवाससा।। (घेरण्डसंहिता 1/35)
- कासश्वासप्लीहकुष्टं कफरोगश्य विंशाति :
  धौतिकर्मप्रभावेन प्रयान्तयेव न संशय : (हठप्रदिपिका 2/25)

RRIJM 2015, All Rights Reserved